आचार्य कुन्दकुन्द

भारतीय चिन्तकों और ग्रन्थकारोंमें आचार्य कुन्दकुन्दका अग्रपंक्तिमें स्थान है। उन्होंने अपने विपुल वाङ्मयके द्वारा भारतीय संस्कृतिको तत्त्वज्ञान और अध्यात्म प्रधान विचार तथा आचार प्रदान किया है। भारतीय साहित्यमें प्राकृत-भाषाके महापण्डित और इस भाषामें निबद्ध सिद्धान्त-साहित्यके रचयिताके रूपमें इनका नाम दूर अतीतकालसे विश्रुत है। मङ्गलकार्यके आरम्भमें बड़े आदरके साथ इनका स्मरण किया जाता है। अन्तिम तीर्थंकर भगवान् महावीर और उनके प्रधान गणधर गौतम इन्द्रभूतिके पश्चात् आचार्य कुन्दकुन्दका मङ्गलरूपमें उल्लेख किया गया है। जैसा कि निम्न पद्यसे प्रकट है—

मङ्गलं भगवान् वीरो मङ्गलं गौतमो गणी।
मङ्गलं कुन्दकुन्दार्यो जैनधर्मोऽस्तु मङ्गलम्॥

इससे अवगत होता है कि आचार्य कुन्दकुन्द एक महान् प्रभावशाली हुए हैं, जो पिछले दो हजार वर्षोंमें हुए हजारों आचार्योंमें प्रथम एवं असाधारण आचार्य हैं। उनके उत्तरवर्ती ग्रन्थकारोंने अपने ग्रन्थोंमें उन्हें सश्रद्ध स्मरण किया है। इतना ही नहीं, शिलालेखोंमें भी उनकी असाधारण विद्वत्ता, अनुपम संयम, अद्भुत इन्द्रिय-विजय, उन्हें प्राप्त ऋद्धि-सिद्धियों आदिका विशेष उल्लेख किया गया है। पट्टावलियोंसे विदित है कि उन्होंने आठ वर्षकी अवस्थामें ही साधु-दीक्षा ले ली थी और समग्र जीवन संयम और तपोनुष्ठान पूर्वक व्यतीत किया था। वे चौरासी वर्ष तक जिये थे और इस लम्बे जीवनमें उन्होंने दीर्घ चिन्तन, मनन एवं ग्रन्थ-सृजन किया था।

इनके समयपर अनेक विद्वानोंने ऊहापोहपूर्वक विस्तृत विचार किया है। स्वर्गीय पं० जुगलकिशोर 'मुख्तार' ने[1] अनेक प्रमाणोंसे विक्रमकी पहली शताब्दी समय निर्धारित किया है। मूल संघकी उपलब्ध पट्टावलीके अनुसार भी यही समय (वि० सं० ४९) माना गया है। डॉ० ए० एन० उपाध्येने[2] सभीके मान्य समयपर गहरा ऊहापोह किया है और ईस्वी सन्का प्रारम्भ उनका अस्तित्व-समय निर्णीत किया है।

ग्रन्थ-रचना

कुन्दकुन्दने अपनी ग्रन्थ-रचनाके लिए प्राकृत, पाली और संस्कृत इन तीन प्राचीन भारतीय भाषाओंमेंसे प्राकृतको चुना। प्राकृत उस समय जन-भाषाके रूपमें प्रसिद्ध थी और वे जन-साधारण तक अपने चिन्तनको पहुँचाना चाहते थे। इसके अतिरिक्त षट्खण्डागम, कषायपाहुड जैसे आर्ष ग्रन्थ प्राकृतमें ही निबद्ध होनेसे प्राकृतकी दीर्घकालीन प्राचीन परम्परा उन्हें प्राप्त थी। अतएव उन्होंने अपने सभी ग्रन्थोंकी रचना प्राकृत भाषामें ही की। उनकी यह प्राकृत शौरसेनी प्राकृत है। इसी शौरसेनी प्राकृतमें दिगम्बर परम्पराके उत्तरवर्ती आचार्योंने भी अपने ग्रन्थ रचे हैं। प्राकृत-साहित्यके निर्माताओंमें आचार्य कुन्दकुन्दका मूर्धन्य स्थान है। इन्होंने जितना प्राकृत-वाङ्मय रचा है उतना अन्य मनीषीने नहीं लिखा। कहा जाता है कि

---

१. पुरातन-वाक्य-सूची, प्रस्तावना, पृ० १२, वीर सेवा मन्दिर, सरसावा, १९५० ई०।

२. प्रवचनसार, प्रस्तावना, पृ० १०-२५, परमश्रुत प्रभावक मण्डल, बम्बई, १९३५ ई०।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कुन्दकुन्दने ८४ पाहुडों (प्राभृतों-प्रकरणग्रन्थों) तथा आचार्य पुष्पदन्त-भूतबली द्वारा रचित 'षट्खण्डागम' आर्ष ग्रन्थकी विशाल टीकाकी भी रचना की थी। पर आज वह सब ग्रन्थ-राशि उपलब्ध नहीं है। फिर भी जो ग्रन्थ प्राप्त हैं उनसे जैन वाङ्मय समृद्ध एवं देदीप्यमान है। उनकी इन उपलब्ध कृतियोंका संक्षिप्त परिचय दिया जाता है—

१. प्रवचनसार—इसमें तीन अधिकार हैं—(१) ज्ञानाधिकार, (२) ज्ञेयाधिकार और (३) चारित्राधिकार। इन अधिकारोंमें विषयोंके वर्णनका अवगम उनके नामोंसे ज्ञात हो जाता है। अर्थात् पहले अधिकारमें ज्ञानका, दूसरेमें ज्ञेयका और तीसरेमें चारित्र (साधु-चारित्र) का प्रतिपादन है। इस एक ग्रन्थके अध्ययनसे जैन तत्त्वज्ञान अच्छी तरह अवगत हो जाता है। इसपर दो व्याख्याएँ उपलब्ध हैं—एक आचार्य अमृतचन्द्रकी और दूसरी आचार्य जयसेनकी। अमृतचन्द्रकी व्याख्यानुसार इसमें २७५ (९२ + १०८ + ७५) गाथाएँ हैं और जयसेनकी व्याख्याके अनुसार इसमें ३१७ गाथाएँ हैं। यह गाथाओंकी संख्याकी भिन्नता व्याख्याकारोंको प्राप्त न्यूनाधिक संख्यक प्रतियोंके कारण हो सकती है। यदि कोई अन्य कारण रहा हो तो उसकी गहराईसे छानबीन की जानी चाहिए। ये दोनों व्याख्याएँ संस्कृतमें निबद्ध हैं और दोनों ही मूलको स्पष्ट करती हैं। उनमें अन्तर यही है कि अमृतचन्द्रकी व्याख्या गद्य-पद्यात्मक है और दुरूह एवं जटिल है। पर जयसेनकी व्याख्या सरल एवं सुखसाध्य है। तथा केवल गद्यात्मक है। हाँ, उसमें पूर्वाचार्योंके उद्धरण प्राप्त हैं।

२. पंचास्तिकाय—इसमें दो श्रुतस्कन्ध (अधिकार) हैं—१ षड्द्रव्य-पंचास्तिकाय और २ नवपदार्थ। दोनोंके विषयका वर्णन उनके नामोंसे स्पष्ट विदित है। इसपर भी उक्त दोनों आचार्योंकी संस्कृतमें टीकाएँ हैं और दोनों मूलको स्पष्ट करती हैं। पहले श्रुतस्कन्धमें १०४ और दूसरेमें आचार्य अमृतचन्द्रके अनुसार ६८ तथा जयसेनाचार्यके अनुसार ६९ कुल १७२ या १७३ गाथाएँ हैं। '**मग्गप्पभावणट्ठं**'' यह (१७३ संख्यक) गाथा अमृतचन्द्रकी व्याख्यामें नहीं है किन्तु जयसेनकी व्याख्यामें है। यह गाथा-संख्याकी न्यूनाधिकता भी व्याख्याकारोंको प्राप्त न्यूनाधिकसंख्यक प्रतियोंका परिणाम जान पड़ता है।

३. समयसार—इसमें दश अधिकार हैं—१ जीवाजीवाधिकार, २ कर्त्तृकर्माधिकार, ३ पुण्यपापाधिकार, ४ आस्रवाधिकार, ५ संवराधिकार, ६ निर्जराधिकार, ७ बन्धाधिकार, ८ मोक्षाधिकार, ९ सर्वविशुद्धज्ञानाधिकार और १० स्याद्वादाधिकार। इन अधिकारोंके नामसे ही उनके विषयोंका ज्ञान हो जाता है। अन्तिम अधिकार व्याख्याकार आचार्य अमृतचन्द्रद्वारा अभिहित है, मूलकार आचार्य कुन्दकुन्दद्वारा रचित नहीं है। अमृतचन्द्रको इस अधिकारको रचनेकी आवश्यकता इसलिए पड़ी कि समयसारका अध्येता पूर्व अधिकारोंमें वर्णित निश्चय और व्यवहारनयोंकी प्रधान एवं गौण दृष्टिसे समयसारके अभिधेय आत्मतत्त्वको समझे और निरूपित करे। इसीसे उन्होंने स्याद्वादाधिकारमें स्याद्वादके वाच्य—अनेकान्तका समर्थन करनेके लिए तत्-अतत्, सत्-असत्, एक-अनेक, नित्य-अनित्य आदि अनेक नयों (दृष्टियों) से आत्मतत्त्वका विवेचन किया है। अन्तमें कलश काव्योंमें इसी तथ्यको स्पष्टतया व्यक्त किया है। समयसारपर भी उक्त दोनों आचार्योंकी संस्कृत-व्याख्याएँ हैं, जो मूलके हार्दको बहुत उत्तम ढंगसे स्पष्ट करती हैं। अमृतचन्द्रने प्रत्येक गाथापर बहुत सुन्दर एवं प्रौढ़ कलशकाव्य भी रचे हैं, जो आचार्य कुन्दकुन्दके गाथा-मन्दिरके शिखरपर चढ़े कलशकी भाँति सुशोभित होते हैं। अनेक विद्वानोंने इन समस्त कलशकाव्योंको 'समयसार-कलश'के नामसे पुस्तकारूढ़ करके प्रकाशित भी किया है। समयसार और समयसार-कलशके हिन्दी आदि भाषाओंमें अनुवाद भी हुए हैं, जो इनकी लोकप्रियताको प्रकट करते हैं। इसमें ४१५ गाथाएँ हैं। यह समयसार (समयप्राभृत) तत्त्वज्ञानप्रपूर्ण है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

४. **नियमसार**—इसमें १२ अधिकार और १८७ गाथाएँ हैं। इसपर पद्मप्रभमलधारीदेवकी संस्कृत-टीका है, जो मूलको तो स्पष्ट करती ही है, सम्बद्ध एवं प्रसंगोपात्त स्वरचित एवं अन्य ग्रन्थकारोंके श्लोकोंका भी आकर है। इस ग्रन्थमे भी समयसारकी तरह आत्मतत्त्वका प्रतिपादन है। मुमुक्षुके लिये यह उतना ही उपयोगी और उपादेय है जितना उक्त समयसार।

५. **दंसण-पाहुड**—इसमें सम्यग्दर्शनका २६ गाथाओं में विवेचन है। इसकी कई गाथाएँ तो सदा स्मरणीय है। यहाँ निम्न तीन गाथाओंको देनेका लोभ संवरण नहीं कर सकता—

दंसणभट्टा भट्टा दंसणभट्टस्स णत्थि णिव्वाणं।
सिज्झंति चरियभट्टा दंसणभट्टा ण सिज्झंति ॥३॥
समत्तरयणभट्टा जाणंता बहुविहाइं सत्थाइं।
आराहणाविरहिया भमंति तत्थेव तत्थेव ॥४॥
सम्मत्तविरहियाणं सुट्ठु वि उग्गं तवं चरंताणं।
ण लहंति बोहिबाहं अवि वाससहस्सकोडीहिं ॥५॥

इन गाथाओंमें कहा गया है कि 'जो सम्यग्दर्शनसे भ्रष्ट हैं वे वस्तुतः भ्रष्ट (पतित) हैं, क्योंकि सम्यग्दर्शनसे भ्रष्ट मनुष्यको मोक्ष प्राप्त नहीं होता। किन्तु जो सम्यग्दर्शनसे सहित हैं और चारित्रसे भ्रष्ट हैं उन्हें मोक्ष प्राप्त हो जाता है। पर सम्यग्दर्शनसे भ्रष्ट सिद्ध नहीं होते। जो अनेक शास्त्रोंके ज्ञाता हैं, किन्तु सम्यक्त्व-रत्नसे च्युत हैं वे भी आराधनाओंसे रहित होनेसे वहीं वहीं संसारमें चक्कर काटते हैं। जो करोड़ों वर्षों तक उग्र तप करते हैं किन्तु सम्यग्दर्शनसे रहित हैं वे भी बोधिलाभ (मोक्ष) को प्राप्त नहीं होते।'

कुन्दकुन्दने 'दंसण-पाहुड' में सम्यग्दर्शनका महत्त्व निरूपित कर उसकी प्राप्तिपर ज्ञानी और साधु दोनोंके लिए बल दिया है।

६. **चारित्तपाहुड**—इसमें ४४ गाथाओंके द्वारा मनुष्य जीवनको उज्ज्वल बनाने वाले एवं मोक्ष-मार्गके तीसरे पाये सम्यक्चारित्रका अच्छा निरूपण है।

७. **सुत्तपाहुड**—इसमें २७ गाथाएँ हैं। उनमें सूत्र (निर्दोषवाणी) का महत्त्व और तदनुसार प्रवृत्ति करनेपर बल दिया गया है।

८. **बोधपाहुड**—इसमें ६२ गाथाएँ हैं; जिनमें उन ११ बातोंका निरूपण किया गया है, जिनका बोध मुक्तिके लिए आवश्यक है।

९. **भावपाहुड**—इसमें १६३ गाथाओं द्वारा भावों—आत्मपरिणामोंकी निर्मलताका विशद निरूपण किया गया है।

१०. **मोक्खपाहुड**—इसमें १०६ गाथाएँ निबद्ध हैं। उनके द्वारा आचार्यने मोक्षका स्वरूप बतलाते हुए बहिरात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा इन तीन आत्मभेदोंका प्रतिपादन किया है।

११. **लिंगपाहुड**—इसमें २२ गाथाएँ हैं। इन गाथाओंमें मुक्तिके लिए आवश्यक लिंग (वेष), जो द्रव्य और भाव दो प्रकार का है, विवेचित है।

१२. **सीलपाहुड**—४० गाथाओं द्वारा इसमें विषयतृष्णा आदि अशीलको बन्ध एवं दुःखका कारण बतलाते हुए जीवदया, इन्द्रिय-दमन, संयम आदि शीलों (सम्प्रवृत्तियों) का निरूपण किया गया है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इन उपर्युक्त आठ पाहुडोंको 'अष्टपाहुड' कहा जाता है और आरम्भके ६ पाहुडोंपर श्रुतसागर सूरिकी संस्कृत-व्याख्याएँ हैं।

१३. बारस अणुवेक्खा—इसमें वैराग्योत्पादक १२ अनुप्रेक्षाओं (भावनाओं) का ९१ गाथाओंमें प्रतिपादन है।

१४. सिद्धभत्ति—इसमें १२ गाथाओं द्वारा सिद्धोंका स्वरूप व उनकी भक्ति वर्णित है।

१५. सुदभत्ति—इसमें ११ गाथाएँ हैं। उनमें श्रुतकी भक्ति प्रतिपादित है।

१६. चारित्तभत्ति—इसमें १० अनुष्टुप् गाथाओं द्वारा पाँच प्रकारके चारित्रका दिग्दर्शन हैं।

१७. योगिभत्ति—२३ गाथाओं द्वारा इसमें योगियोंकी विभिन्न अवस्थाओंका विवेचन है।

१८. आयरियभत्ति—इसमें १० गाथाओं द्वारा आचार्यके गुणोंकी संस्तुति की गयी है।

१९. णिव्वाणभत्ति—इसमें २७ गाथाएँ हैं और उनमें निर्वाणका स्वरूप एवं निर्वाणप्राप्त तीर्थंकरोंकी स्तुति की गयी है।

२०. पंचगुरुभत्ति—यह सात गाथाओंकी लघु कृति है और पाँच परमेष्ठियोंकी भक्ति इसमें निबद्ध है।

२१. थोस्सामिथुदि—इसमें ८ गाथाओं द्वारा ऋषभादि चौबीस तीर्थंकरोंकी स्तुति की गयी है।

इन रचनाओंके सिवाय कुछ विद्वान् 'रयणसार' और 'मूलाचार' को भी कुन्दकुन्दकी रचना बतलाते हैं।

कुन्दकुन्दकी देन

कुन्दकुन्दके इस विशाल वाङ्मयका सूक्ष्म और गहरा अध्ययन करनेपर उनकी हमें अनेक उपलब्धियाँ अवगत होती हैं। उनका यहाँ अंकन करके उनपर संक्षिप्त विचार करेंगे। वे ये हैं—

१ साहित्यिक उद्भावनाएँ, २ दार्शनिक चिन्तन, ३ तात्त्विक विचारणा और ४ लोककल्याणी दृष्टि।

१. साहित्यिक उद्भावनाएँ—हम पहले कह आये हैं कि कुन्दकुन्दकी उपलब्ध समग्र ग्रन्थ-रचना प्राकृत-भाषामें निबद्ध है। प्राकृत-साहित्य गद्यसूत्रों और पद्यसूत्रों दोनोंमें उपनिबद्ध हुआ है। कुन्दकुन्दने अपने समग्र ग्रन्थ, जो उपलब्ध हैं, पद्यसूत्रों—गाथाओंमें ही रचे हैं। प्राकृतका पद्य-साहित्य यद्यपि एकमात्र गाथा-छन्दमें, जो आर्याछन्दके नामसे प्रसिद्ध है, प्राप्त है। किन्तु कुन्दकुन्दके प्राकृत पद्य-वाङ्मयकी विशेषता यह है कि उसमें गाथा-छन्दके अतिरिक्त अनुष्टुप् और उपजाति छन्दोंका भी उपयोग किया गया है और इस छन्दवैविध्यसे उसमें सौन्दर्यके साथ आनन्द भी अध्येताको प्राप्त होता है। अनुष्टुप् छन्दके लिए भावपाहुड गाथा ५९, नियमसार गाथा १२६ और उपजाति छन्दके लिए प्रवचनसारके ज्ञेयाधिकारकी '**णिद्धस्स णिद्धेण दुराहिएण**' गाथाएँ द्रष्टव्य हैं। यद्यपि षट्खण्डागमके पंचम वर्गणाखण्डके ३६ वें '**णिद्धस्स णिद्धेण**' सूत्रको ही अपने ग्रन्थका अंग बना लिया है। फिर भी छन्दोंकी विविधतामें क्षति नहीं आती।

इसी प्रकार अलंकार-विविधता भी उनके ग्रन्थोंमें उपलब्ध होती है, जो काव्यकी दृष्टिसे उसका होना अच्छा है। अप्रस्तुतप्रशंसा अलंकारके लिए भावपाहुडकी '**ण मुयइ पयडि अभव्वो**' (१३७ संख्यक) गाथा, उपमालंकारके लिए इसी ग्रन्थकी '**जह तारयाण चंद्रो**' (१४३ संख्यक) गाथा और रूपकालंकारके लिए उसीकी '**जिणवरचरणंबुरुहं**' (१५२) गाथा देखिए। इस प्रकार कुन्दकुन्दके प्राकृत वाङ्मयमें अनेक साहित्यिक उद्भावनाएँ परिलक्षित होती हैं, जिससे अवगत होता है कि आचार्य कुन्दकुन्द केवल सिद्धान्तवेत्ता मनीषी

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ही नहीं थे, वे प्राकृत और संस्कृत भाषाओंके प्रौढ़ कवि भी थे और इन भाषाओंमें विविध छन्दों तथा अलंकारोंमें कविता करनेकी विशिष्ट प्रतिभा उन्हें प्राप्त थी ।

दार्शनिक चिन्तन

कुन्दकुन्दका दार्शनिक चिन्तन आगम, अनुभव और तर्कपर विशेष आधृत है । जब वे किसी वस्तुका विचार करते हैं तो उसमें सिद्धान्तके अलावा दर्शनका आधार अवश्य रहता है। पंचास्तिकायमें कुन्दकुन्दने द्रव्यके लक्षण किये हैं । एक यह कि जो सत् है वह द्रव्य है तथा सत् उसे कहते हैं जिसमें उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य दो पाये जायें । जगत्की सभी वस्तुएँ सत्स्वरूप हैं और इसीसे उनमें प्रतिक्षण उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य पाया जाता है । दूसरा लक्षण यह है कि जो गुणों और पर्यायोंका आश्रय है । अर्थात् गुण-पर्याय वाला है । पहला लक्षण जहाँ द्रव्यकी त्रयात्मक शक्तिको प्रकट करता है वहाँ दूसरा लक्षण द्रव्यको गुणों और पर्यायोंका पुञ्ज सिद्ध करता है तथा उसमें सहानेकान्त और क्रमानेकान्त दो अनेकान्तोंको सिद्ध कर सभी वस्तुओंको अनेकान्तात्मक बतलाता है । कुन्दकुन्दके इन दोनों लक्षणोंको उत्तरवर्ती गृद्धपिच्छ जैसे सभी आचार्योंने अपनाया है ।

कुन्दकुन्दका दूसरा नया चिन्तन यह है कि आगमोंमें जो **'सिया अत्थि'** (स्याद् अस्ति—कथंचित् है) और **'सिया णत्थि'** (स्यान्नास्ति—कथंचित् नहीं है) इन दो भंगों (प्रकारों)से वस्तुनिरूपण है । कुन्दकुन्दने उसे सात भंगों (प्रकारों) से प्रतिपादित किया है तथा द्रव्यमात्रको सात भंग (सात प्रकार) रूप बतलाया है । उनका यह चिन्तन एवं प्रतिपादन समन्तभद्र जैसे आचार्योंके लिए मार्गदर्शक सिद्ध हुआ । समन्तभद्रने उनकी इस 'सप्तभंगी' को आप्तमीमांसा, स्वयम्भूस्तोत्र आदिमें विकसित किया एवं विशदतया निरूपित किया है ।

तात्त्विक चिन्तन

कुन्दकुन्दकी उपलब्ध सभी रचनाएँ तात्त्विक चिन्तनसे ओतप्रोत हैं । समयसार और नियमसारमें जो शुद्ध आत्माका विशद और विस्तृत विवेचन है वह अन्यत्र अलभ्य है। आत्माके बहिरात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा इन तीन भेदोंका (मोक्षपाहुड ४ से ७) कथन उनसे पहले किसी ग्रन्थमें उपलब्ध नहीं है । सम्यग्दर्शनके आठ अंगोंका निरूपण (स० सा० २२९-२३६), अणुमात्र राग रखने वाला सर्वशास्त्रज्ञ भी स्वसमयका ज्ञाता नहीं (पंचा० १६७), जीवको सर्वथा कर्मबद्ध अथवा कर्म-अबद्ध बतलाना नय पक्ष (एकान्तवाद) है और दोनोंका ग्रहण करना समयसार है (स. सा. १४१-१४३), तीर्थंकर भी वस्त्रधारी हो तो सिद्ध नहीं हो सकता (दं० पा० २३) आदि तात्त्विक विवेचन कुन्दकुन्दकी देन है ।

लोक कल्याणी दृष्टि

कुन्दकुन्दकी दृष्टिमें गुण कल्याणकारी हैं, देह, जाति, कुल आदि नहीं । (दं. पा. २७) आदि निरूपण भी उनकी प्रशस्त देन है । इस प्रकार मनुष्यमात्रके हितका मार्ग उन्होंने प्रशस्त किया है ।

■

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org